www.thearyasamaj.org

आर.एन.आई. रजि० नं० HRHIN/2003/10425
डाक पंजीकरण संख्या : RTK/10/2014-16
सृष्टि संवत् 1960853117
विक्रम संवत् 2073
दयानन्दाब्द 193

सेवा में,

महर्षि दयानन्द सरस्वती

E-mail : aryapsharyana@yahoo.in
Website : www.apsharyana.org

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का साप्ताहिक मुखपत्र दूरभाष : 01262-216222, Mob. 8901387993
विदेश में वार्षिक शुल्क : 75 डॉलर विदेश में आजीवन शुल्क : 300 डॉलर सम्पादक : मा० रामपाल आर्य
वर्ष : 13 अंक : 26 रोहतक, 7 दिसम्बर, 2016 वार्षिक शुल्क : 150/- आजीवन 1500/-

जीवन के चार गुण

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा-
शास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा
न आयुः प्र मोषीः॥ 11॥

अर्थ-हे देव! मैं (त्वा) तुमसे (तत्) उस व्रतपालन को (यामि) माँगता हूँ (ब्रह्मणा) वेद के द्वारा (वन्दमानः) वन्दना करता हुआ (अहेळमानः) किसी से क्रोध न करता हुआ (यजमानः) यह यजमान मेरा आत्मा (हविर्भिः) हवियों द्वारा (तत्) उस व्रतपालन से आपसे (आशास्ते) माँगता है (वरुण) हे वरणीय देव! (इह) इस अवस्था में (बोधि) मेरी प्रार्थना को जानिए, सुनिए (उरुशंस) हे बड़े-बड़ों द्वारा प्रशंसित देव! (नः) हमारी (आयुः) आयु को (मा) मत (प्रमोषीः) छीनिए।

पीछे नवम मन्त्र में कहा गया था कि भगवान् की कृपा प्राप्त करने के लिए जीवन निष्पाप होना चाहिए। दशम मन्त्र में भगवान् के अदब्ध व्रतों की ओर संकेत करते हुए यह निर्देश किया था कि प्रभु के निर्धारित नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करने से ही वह पवित्र हो सकता है। प्रस्तुत मन्त्र में उसी नियम-पालन के जीवन की भगवान् से विशेष रूप से प्रार्थना की गई है और उसी प्रार्थना के प्रसंग में यह भी बता दिया गया है कि हमारा जीवन भगवान् के निर्धारित नियमों के अनुसार किस प्रकार बीत सकता है।

मन्त्र का उपासक अपने भगवान् से कह रहा है कि हे भगवन! मैंने देख लिया है कि आपके पास जो हमारे क्लेशों को काटने वाली सैकड़ों और हजारों औषधियां हैं, आप जो हमारे ऊपर असंख्य मंगलों की वर्षा करने की शक्ति रखते हैं उन्हें प्राप्त करने के लिए हमारे जीवन का पापरहित होना

❑ आचार्य प्रियव्रत

आवश्यक है और इसके लिए आपके बनाए वैयक्तिक और सामाजिक जीवन के नियमों का पालन करना आवश्यक है तो हे भगवन्! मैं आपसे आपके उन नियमों के पालन की शक्ति की ही प्रार्थना करता हूँ। मैं आपकी कृपा से आपके इन सब नियमों का भलीभांति पालन कर सकूँ।

उपासक कहता है कि हे भगवन्! मैं आपसे 'तत्' अर्थात् उस नियम पालन की ही याचना करता हूँ, परन्तु आपसे नियम पालन के जीवन की प्रार्थना करने वाला मैं याचक ऐसा-वैसा नहीं हूँ। मेरे याचना करने के प्रकार को भी आप देख लीजिए। मैं 'ब्रह्म' द्वारा 'वन्दमान' हो चुका हूँ, 'अहेळमान' हो चुका हूँ और 'यजमान' हो चुका हूँ और 'हवियों' का दान करने वाला हो चुका हूँ। इस प्रकार ब्रह्म के द्वारा वन्दमान, अहेळमान और यजमान होकर हवियों के दान के जीवन द्वारा मैं आपसे नियम-पालन के जीवन की याचना करता हूँ। उपासक के इस कथन का रहस्य समझ लेना चाहिए। 'ब्रह्म' वेद-विद्या को कहते हैं। 'वन्दमान' कहते हैं वन्दना करने वालों को, उपासना करने वाले को। उपासक कहता है कि मैं वेद के द्वारा वन्दमान बन चुका हूँ। वेद में उपासना करने का, भगवान् की सेवा में पहुंचकर उन्हें रिझाने का जो प्रकार बताया गया है वह मैंने जान लिया है। अपने और परमात्मा के स्वरूप को पहचान कर मैं वेद में कहे अनुसार नित्य परमात्मा की उपासना किया करता हूँ। मैं भगवान् का भक्त बन गया हूँ। मेरी लौ सदा भगवान् में लगी रहती है। मैं भगवान् से प्रेम में रत रहता हूँ। भगवान् में विश्वास रखने वाला पूर्ण आस्तिक बन चुका हूँ। इसके साथ मैं वेद के द्वारा 'अहेळमान' भी बन चुका हूँ। 'अहेळमान' का शब्दार्थ होता है क्रोध न करने वाला। उपासक कहता है कि वेद में जीवन को क्रोधरहित बनाने के लिए जो उपदेश दिए गए हैं, मैंने उनका पूर्ण रीति से मनन और पालन किया है। इसके परिणाम स्वरूप मेरा जीवन क्रोधरहित हो गया है।

मैं जो क्रोध में भरपूर दूसरे प्राणियों को कटु शब्दों का प्रयोग करके और क्रोध के अधिक आवेश में अन्य उपायों द्वारा हानि पहुंचाकर कष्ट दिया करता था, वह मैंने अब छोड़ दिया है। अब मैं क्रोध को त्यागकर अहिंसाव्रत का व्रती बन गया हूँ। अब मैं किसी प्रकार की छोटी-बड़ी उत्तेजना से उत्तेजित होकर क्रोध में भरकर किसी को कोई कष्ट देने के लिए, किसी का किसी प्रकार का अनिष्ट करने के लिए, उद्यत नहीं हूँ। मेरे हृदय में अब क्रोध का स्थान प्रेम और शान्ति ने ले लिया है। वेद के अध्ययन से मुझमें एक और परिवर्तन आ गया है। मैं वेद के स्वाध्याय द्वारा 'यजमान' बन गया हूँ। 'यजमान' कहते हैं यज्ञ करने वाले को। उपासक कहता है कि वेद में जीवन को यज्ञमय बनाने का जो उपदेश है, उसका मैंने ग्रहण किया है। उसके ग्रहण से मेरा जीवन अब यज्ञ का जीवन हो गया है। 'यज्ञ' का शब्दार्थ होता है, देवपूजा, संगतिकरण और दान। उपासक कहता है कि वेद के द्वारा मेरा जीवन यज्ञमय होकर देवपूजा, संगतिकरण और दान का जीवन बन गया है। मैं अब देवों की पूजा करता हूँ। देवाधिदेव परमात्मा की पूजा तो मैं नित्य करता ही हूँ, क्योंकि मैं 'वन्दमान' बन चुका हूँ। इसके अतिरिक्त विद्वान् पुरुषों की और अनुभव के धनी बड़े बूढ़ों के रूप में जो अन्य देव हैं, उनकी भी पूजा मैं नित्य करता हूँ। मैं उनका प्रतिदिन यथोचित आदर-सत्कार करता हूँ। मेरे जीवन में अब संगतिकरण होता है। मैं योग्य पुरुषों के साथ विशेषकर 'देव' पुरुषों के साथ अपने जीवन को संगत करता हूँ-उनकी संगति में बैठता हूँ। उनकी संगति में बैठकर उनसे भांति-भांति के गुणों को सीखता हूँ। अग्नि, वायु, जल, पृथिवी, सूर्य, चन्द्र, विद्युत् आदि जो जड़देव हैं, मैं उनके साथ भी अपने आपको संगत करता हूँ। उनकी संगति में बैठकर मैं उनकी रचना, उनके नियमों, उनके कार्यों और कारणों के विषय में ज्ञान प्राप्त करता हूँ। उन विषयक भाँति-भाँति की विद्याओं की शिक्षा प्राप्त करता हूँ। मेरा जीवन अब दान का जीवन हो गया है। देवा की पूजा और देवों के साथ संगति करने से मुझे जो कुछ प्राप्त होता है, मुझे जो लाभ होता है, मुझे जो शक्ति मिलती है, उसका मैं दान करता रहता हूँ। मेरे पास जो कुछ होता है, उसे मैं औरों को बाँटता रहता हूँ। मेरा जीवन अब दान का, उपकार का, दूसरों को अपना अंग समझकर अपने पदार्थ उनको देते रहने का जीवन हो गया है। यजमान शब्द में छिपे हुए 'दान' अर्थ से जो भाव निकल रहा था उसी को प्रकारान्तर से और स्पष्ट करके उपासक कहता है कि वेद के

क्रमशः पृष्ठ 2 पर.....

www.thearyasamaj.org

जीवन के चार गुण.... प्रथम पृष्ठ का शेष....

द्वारा मेरा जीवन 'हवि' का जीवन हो गया है। मैं अब जीवन द्वारा हवियाँ देता रहता हूँ। हम जब अपने पदार्थों को दूसरों के निमित्त त्यागते हैं, दान करते हैं, तब उन पदार्थों को 'हवि' कहा जाता है, इसलिए यज्ञ में मन्त्रों द्वारा आहुति देकर अग्नि में छोड़े हुए पदार्थ को 'हवि' कहते हैं। यज्ञाग्नि में दी गई आहुति आत्मत्याग की भावना का चिह्नरूप होती है। सारे ही यज्ञ यजमान के हृदय में विशेष भावनाओं को जगाने के लिए चिह्नरूप होते हैं। उपासक कहता है कि मेरा जीवन 'हवि' का जीवन हो गया है। मैं अपने पदार्थों को, अपनी सब प्रकार की शक्तियों को, 'हवि' बना-बनाकर लोकोपकार के लिए दान करता रहता हूँ। यज्ञाग्नि में दी गई 'हवियों' में जो आत्मत्याग की भावना निहित है, वह अब मेरे भीतर आ चुकी है। मेरा जीवन अब पूर्ण आत्मत्याग का, पूर्ण बलिदान का जीवन बन चुका है। मेरा अब कोई कार्य अपने तुच्छ स्वार्थ के निमित्त नहीं होता। अब स्वार्थ का स्थान मेरे जीवन में परार्थ ने ले लिया है। अब जो कुछ मैं करता हूँ वह सब लोक कल्याण की भावना से करता हूँ। मेरे जीवन में अब जो कार्य स्वार्थ के लिए भी हो रहे दीखते हैं, वे भी इसलिए हो रहे हैं कि मैं उनके द्वारा शक्ति पाकर लोकोपकार के कार्य और अधिक कर सकूँ। अब तो मेरे जीवन में 'हवि' ही 'हवि', 'त्याग' ही 'त्याग' रह गया है।

हे भगवन्! मैं वेद के द्वारा अपना जीवन ऐसा वन्दमान, अहेळमान, यजमान और 'हवियों' का दान करने वाला बनाकर आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। ऐसा बनकर मैं आपके द्वारा निर्धारित जीवन के वैयक्तिक और सामाजिक नियमों के पालन की शक्ति की प्रार्थना करने आया हूँ। अब तो आप मेरी सहायता कीजिए।

पाठक देखेंगे कि मन्त्र के उपासक ने अपना वर्णन करते हुए भगवान् से नियम-पालन की जो जीवन में सहायता की कृपा करने की प्रार्थना की है उसके द्वारा वेद ने कैसी अद्भुत कवितामयी शैली में यह बता दिया है कि किस प्रकार के लोग भगवान् के निर्धारित नियमों का पालन कर सकते हैं। जो लोग परमात्मा के विश्वास और उसकी उपासना का आस्तिक जीवन व्यतीत करते हैं, जिन्होंने हृदय के क्रोध आदि विकारों को जीतकर उनके स्थान में प्रेम, अहिंसा, शान्ति आदि भावों को दृढ़ कर लिया है, जो देवपुरुषों का आदर और सत्कार करते हैं, जो ज्ञानी देवों और जड़देवों की संगति में जाकर विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान को उपलब्ध करते हैं और अन्त में जो अपनी सब उपलब्ध सामग्री को लोकोपकार के लिए खर्च कर डालने की वृत्ति को आत्मा में जगा लेते हैं, वे लोग ही प्रभु के नियमों का भलीभांति पालन कर सकते हैं और उन्हीं को नियम-पालन में भगवान् की ओर से सहायता मिलती है। जो लोग इस प्रकार का यज्ञमय नहीं बनाते उनके हृदय में रहने वाली काम, क्रोध, लोभ, मोह, स्वार्थ आदि की राजस् और तामस् वृत्तियाँ उनके जीवन को इस प्रकार का बना देंगी कि उनसे भगवान् के द्वारा निर्धारित वैयक्तिक और सामाजिक जीवन के नियमों का पालन नहीं हो सकेगा। नियमित जीवन में त्याग करना होता है। ऐसे लोग त्याग नहीं कर सकते और ऐसे लोगों की कोरी शाब्दिक प्रार्थना से भगवान् उन्हें कोई सहायता नहीं देने लगे। क्रियाशील, प्रयत्नवान् पुरुष को ही भगवान् की सहायता प्राप्त होती है। सन्मार्ग के अविश्रान्त पथिक पर ही भगवान् अपनी कृपा की वर्षा किया करते हैं।

मन्त्र के अन्तिम चरण में उपासक भगवान् से कह रहा है कि हे देव! मैं अमुक-अमुक गुणों वाला बनकर आपकी सेवा में प्रार्थना करने आया हूँ, इस अवस्था में तो आप मेरी प्रार्थना को सुनिए और प्रार्थना को सुनकर मेरी आयु का प्रमोष मत कीजिए-उसे मुझसे मत छीनिए। उपासक की इस उक्ति का भाव भी हृदयंगम कर लेना चाहिए। पाठक देख रहे हैं कि मन्त्र में नियम-पालन के जीवन की प्रार्थना की जा रही है। प्रार्थना के प्रसंग में ही उपासक के विशेषणों द्वारा यह भी निर्देश किया गया है कि किस प्रकार के लोग भगवान् के बनाये हुए नियमों के पालन के जीवन की महिमा का वर्णन हो रहा है। इस प्रसंग में मन्त्र के अन्तिम चरण द्वारा की जा रही प्रार्थना का आशय स्वयं स्पष्ट हो जाता है। जिस जीवन में नियमों का पालन है, वही वास्तव में जीवन है। जो व्यक्ति अपनी आयु नियम-पालन के जीवन में लगा पाता है, उसी की आयु वास्तव में सफल है। वास्तव में तो आयु उसी को मिली है, क्योंकि उसने अपनी आयु का वास्तविक सदुपयोग किया है। जिसने अपील आयु प्रभु द्वारा निर्धारित नियमों के पालन में नहीं लगाई है उसकी आयु व्यर्थ गई है। उसकी आयु मानो उससे छिन गई है, क्योंकि उसको आयु का वास्तविक सदुपयोग नहीं प्राप्त हो सका है। आयु का उद्देश्यहीन होकर व्यर्थ जाना उसका छिन जाना ही है, फिर भगवान् ने यह मनुष्य का जीवन हमें इसीलिए प्रदान किया है कि इसके द्वारा हम जीवन का परम पुरुषार्थ-इस लोक और मोक्ष दोनों का सुख प्राप्त कर सकें। वह पुरुषार्थ प्राप्त होता है जीवन में प्रभु के नियमों का पालन करने से। जो मनुष्य जीवन पाकर भी प्रभु के कल्याणकारी नियमों का पालन नहीं करता, प्रत्युत उन्हें तोड़ता रहता है, उसे भगवान् फिर किसी और योनि में भेज देते हैं और इस प्रकार मनुष्य का जीवन उससे छीन लेते हैं। उपासक कह रहा है कि हे प्रभो! आप मेरी प्रार्थना को सुनिए। मुझे नियम-पालन के जीवन में सहायता दीजिए, जिससे मेरा यह मनुष्य-जीवन सफल हो सके, मेरा यह मनुष्य जीवन मुझसे छिन न सके। जब मैं मृत्यु को प्राप्त कर सकूँ तब उसके अनन्तर मोक्ष नहीं तो मनुष्य जीवन को तो आपकी कृपा से फिर भी अवश्य प्राप्त कर सकूँ। आप मेरे दुष्कर्मों से पूर्ण, नियमहीन जीवन से अप्रसन्न होकर मेरी मनुष्य योनि को मुझसे न छीनें।

मन्त्र में वरुणदेव का-वरणीय भगवान् का-एक विशेषण 'उरूशंस' आया है। 'उरूशंस' का अर्थ होता है जो बड़े-बूढ़ों द्वारा प्रशंसित हो। भगवान् 'उरुशंस' हैं। बड़े-बड़े विचारशील आचार्य, ऋषि, मुनि और तत्त्ववेत्ता लोग भगवान् की महिमा के गीत गाते हैं और उसके गीत गाते हुए थकते नहीं हैं। 'उरुशंस' का अर्थ महान् स्तुति वाला भी होता है। भगवान् में अनन्त गुण हैं, इसलिए उनकी अनन्त-स्तुति हो सकती है। 'अरुशंस' का अर्थ महान् अंश, अर्थात् उपदेश वाला भी हो सकता है। भगवान् ने सृष्टि के आरम्भ में वेद द्वारा महान् उपदेश दिया है। इस समय भी वे भक्तजनों के हृदयों में प्रकाश देते रहते हैं। इस प्रकाश महान् उपदेष्टा होने से भी भगवान् 'उरुशंस' हैं। ऐसे भगवान् ही हमें नियम-पालन के जीवन में सहायता दे सकते हैं।

हे मेरे आत्मन्! तू भी ब्रह्म का पारायण किया कर-वेद का अध्ययन किया कर। तेरा जीवन भी वन्दमान, अहेळमान, यजमान और हविर्दान का जीवन हो जाएगा। तदनन्तर तेरे लिए प्रभु के नियमों का पालन सुगम हो जाएगा। उसके परिणाम स्वरूप भगवान् की कृपा तुझ पर बरसने लगेगी।

(साभार : नूतन निष्काम पत्रिका)

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा में बिक्री हेतु निम्न साहित्य उपलब्ध हैं। कृपया इसका लाभ उठावें।

क्र०	पुस्तक का नाम		मूल्य
1.	प्रो० शेरसिंह : एक प्रेरक व्यक्तित्व	—	20-00
2.	धर्म-प्रवेशिका	—	10-00
3.	धर्म-भूषण	—	20-00
4.	वैदिक सिद्धान्त सार	—	20-00
5.	सत्यार्थप्रकाश	—	40-00
6.	वैदिक उपासना पद्धति	—	8-00
7.	पं० जगदेवसिंह सिद्धान्ती जीवन चरित	—	10-00
8.	ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	—	100-00
9.	हैदराबाद सत्याग्रह में हरयाणा का योगदान	—	30-00
10.	पं० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित	—	25-00
11.	महर्षि दयानन्द तथा वेदों पर आक्षेपों का उत्तर	—	15-00
12.	आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो?	—	10-00
13.	पंजाब का हिन्दी रक्षा आन्दोलन	—	100-00
14.	प्राणायाम का महत्त्व	—	15-00
15.	महाराणा प्रताप तथा उनके वंशज	—	10-50
16.	अमर हुतात्मा भगत फूलसिंह जीवनी	—	15-00
17.	अमर शहीद पं० रामप्रसाद 'बिस्मिल' जीवनी	—	30-00
18.	स्वामी श्रद्धानन्द जीवनी (कल्याण मार्ग का पथिक)	—	80-00
19.	सत्यार्थप्रकाश (बड़ी)	—	150-00

www.thearyasamaj.org

दुष्टों की संगति से बचें

❑ कन्हैयालाल आर्य

एक कृषक का बहुत बड़ा खेत था। उसमें गेहूँ की फसल लहलहा रही थी। कृषक फसल को देखकर प्रसन्न होता था किन्तु उस खेत में बहुत सारे चूहे उस कृषक की फसल को काट-काटकर नष्ट कर रहे थे। कृषक ने चूहे को पकड़ने के लिए एक पिंजरा बनवाया। उस पिंजरे में एक घुण्डी लगाकर रोटी का टुकड़ा फंसा देता था। जैसे ही चूहे पिंजरे में आते, रोटी खाने का प्रयास करते, तुरन्त पिंजरे की खिड़की बन्द हो जाती और चूहे उसमें फंस जाते। कृषक प्रात:काल उन चूहों को थोड़ी दूर एक वन में छोड़ आता। जहां चूहे हो जाते हैं, वहां सांप भी पहुंच जाते हैं। सांप का स्वभाव वह अपनी बिल नहीं बनाता बल्कि चूहों की बिल में घुस जाता है। एक सांप ने भी ऐसा ही किया। धीरे-धीरे वह उन चूहों को खाने लगा। एक दिन चूहे नहीं मिले तो वह रेंगता-रेंगता उस कृषक के खेत में जा पहुंचा। वहां ज्यूं ही सांप ने रोटी को खाने का प्रयास किया तो वह पिंजरे में फंस गया।

प्रात:काल हुआ। कृषक अपने खेत पर पहुँचा। कृषक ने देखा कि आज चूहे के स्थान पर सांप पिंजरे में फँसा पड़ा है। सांप ने गिड़गिड़ाते हुए कृषक से प्रार्थना की—मुझे इस कारागार से मुक्त करो। कृषक ने कहा—तुम तो विषधर हो, ज्यों ही मैं तुम्हें मुक्त करूँगा तुम मुझे ही काट डालोगे। सांप ने कहा—आप मुझ पर उपकार करोगे और मैं तुम्हें काटूँगा। मैं कृतघ्न नहीं हूँ। मैं किए हुए उपकार को नहीं भूलता। आप मुझ पर विश्वास कर लो।

मानव स्वभावत: दयाभाव से परिपूर्ण होता है। कृषक ने सर्प पर विश्वास किया। उसे पिंजरे से मुक्त कर दिया। इतनी देर में एक अन्य व्यक्ति उस मार्ग से हाथ में लाठी लिये आ रहा था। सर्प ने उस कृषक से कहा—आप ने मेरे प्राण तो बचा लिये हैं, परन्तु यह राहगीर लाठी लिए आ रहा है, यह मुझे मार डालेगा। आप कृपा करके कहीं मुझे छिपा लो। कृषक ने दयाभाव दिखाते हुए उसे अपनी आस्तीन में छिपा लिया और दूर वन की ओर चल दिया। कृषक ने कहा—अब वन आ गया है। आप अब निर्भय होकर इस वन में प्रवेश कर जाओ।

यह सुनते ही सर्प ने अपनी पूरी शक्ति के साथ कृषक को कस लिया और बोला—मैं तुम्हें काटूँगा। कृषक ने कहा—मैंने तुम्हारी प्राणरक्षा की है और तुम मेरे साथ ऐसा प्रत्युपकार कैसे कर सकते हो? सर्प ने कहा—आप मूर्ख हैं, आप नहीं जानते कि यह मनुष्य जाति सदैव हमारी शत्रु रही है, इसने कभी भी हमें क्षमा नहीं किया। जहाँ भी हमें देखते हैं, वहीं पर हमें मार डालते हैं। मैं भी तुम्हें काटूँगा। कृषक ने कहा—यह तुम्हारा व्यवहार उचित नहीं है। सर्प ने कहा—चलो, यह सामने ऊँट आ रहा है, उसी से न्याय करा लेते हैं। कृषक मान गया। सर्प ने उस ऊँट को सारी कहानी सुनाई और पूछा कि मुझे इसे काटना चाहिए या नहीं? ऊँट तो पहले से ही इस मनुष्य जाति से दु:खी था। ऊँट ने क इसको काटने में कोई पाप नहीं है। यह मनुष्य जाति इतनी दुष्ट है कि मैं कुछ कह नहीं सकता। यह मनुष्य जाति न होती तो संसार के सभी पशु सुख से रहते। परमात्मा ने मेरी पीठ को उभारकर बनाया कि इस पर दस-दस तो व्यक्ति बैठ जाते हैं और पाँच-पाँच क्विंटल बोझ और डाल देते हैं। इसलिए ऐसे अन्यायी जीव को काटने में कोई पाप नहीं है।

वह कृषक ऊँट का न्याय सुनकर बहुत व्याकुल हुआ। साहस करके वह सर्प से बोला—एक बार आपने किसी को न्यायाधीश बनाया। एक बार मुझे किसी और को न्यायाधीश बनाने दीजिये फिर जो निर्णय होगा, मुझे स्वीकार्य होगा। सर्प मान गया। सामने से एक और व्यक्ति आता दिखाई दिया। कृषक ने अपनी सारी कथा उस व्यक्ति को सुनाई और न्याय करने की प्रार्थना की। वह व्यक्ति सर्प की दुष्टता और कृषक की सज्जनता से यह जान लिया कि इस कृषक के साथ अन्याय हुआ है। वह व्यक्ति बुद्धिमान् था। उसने सर्प और कृषक से कहा—मैं जब तक उस स्थिति को जिस स्थिति में आप और सर्प थे, देख न लूँ, तब तक मैं न तो निर्णय ले सकता हूँ और न ही न्याय कर सकता हूँ। अत: मुझे उस स्थान पर ले चलो जहां से आपका पिंजरा रखा हुआ है।

वह व्यक्ति, कृषक और सर्प उस खेत पर उस पिंजरे के पास गये। तप उस व्यक्ति ने सर्प से पूछा—तुम पिंजरे के अन्दर थे या बाहर? सर्प ने कहा—मैं पिंजरे के अन्दर था। उस व्यक्ति ने कहा—इस पिंजरे में तो आप आ ही नहीं सकते। जब तक तुम इस स्थिति में नहीं बैठ जाते, मैं निर्णय कैसे कर सकता हूँ? यह सुनते ही सर्प उस पिंजरे में प्रवेश कर गया और वैसी स्थिति बना ली जैसे फँसने के समय बनाई थी। उस व्यक्ति ने सर्प से पूछा—तब पिंजरे की खिड़की बंद थी या खुली थी? सर्प ने कहा—पिंजरे की खिड़की बंद थी। उस व्यक्ति ने कहा—यह कृषक पिंजरे के बाहर था या अन्दर? सर्प ने कहा—यह कृषक पिंजरे के बाहर था। उस व्यक्ति ने सर्प से कहा—रोटी को तुमने खींचने का प्रयास किया था। सर्प बोला—बिलकुल किया था। वह व्यक्ति बोला—एक बार वैसा प्रयास फिर करो। सर्प ने ज्यों ही रोटी खींचने का प्रयास किया वह पिंजरा बन्द हो गया। अब उस व्यक्ति ने सर्प से फिर पूछा—क्या यही स्थिति थी? तुम पिंजरे के अन्दर थे, पिंजरे की खिड़की बन्द थी, यह कृषक पिंजरे के बाहर था। सर्प ने कहा—बिलकुल यही स्थिति थी। उस व्यक्ति ने कहा—ऐ सर्प! अब तुम मेरा न्याय सुनो। सर्प को पूरी आशा थी कि निर्णय मेरे पक्ष में होगा। परन्तु वह व्यक्ति इस कृषक की सज्जनता के कारण उसे दण्डित नहीं करना चाहता था और वह इस सर्प की कृतघ्नता के कारण उसे दण्डित करके न्याय करना चाहता था। अत: उस व्यक्ति ने सर्प से कहा—ऐ सर्प! तुम दुष्ट हो, तुम पर दया करके इस कृषक ने भूल की है। परन्तु तुमने दया के बदले में इसके प्राण लेने चाहे। यह ठीक नहीं है। तुम्हें इस पिंजरे में ही बन्द रहना चाहिये। यही न्याय है। इस कृषक ने दया करके तुम्हारे प्राण बचाने की भूल की थी, उसका दण्ड यह भुगत चुका है। इतनी देर तक तुम्हारे आतंक से भयभीत रहा है। दया भी पात्र पर करनी चाहिए कुपात्र पर नहीं। तुम दया के पात्र नहीं हो। इस कहानी से हमें यह शिक्षा मिलती है कि दया भी सुपात्र पर दिखानी चाहिए कुपात्र पर नहीं।

इस कहानी को लिखने का मेरा उद्देश्य आपका केवल मनोरंजन करना नहीं है, बल्कि इस आर्य (हिन्दू) जाति को सावधान करने का है। ऐ आर्यो! जागो, जिस देश व जाति का इतिहास नष्ट हो जाता है वह जाति व देश विश्व के मानचित्र से लुप्त हो जाता है। आर्य (हिन्दुओं) को नष्ट करने के लिए मुस्लिम व ईसाई संस्कृति प्रतिदिन विभिन्न षड्यन्त्र कर रही है। भारतीय नेताओं विशेषकर कांग्रेस, वामदल, बसपाई, सपाई आदि भी राष्ट्रघाती कार्यक्रमों को संचालित करने में अपना गौरव मान रहे हैं। जब तक आर्य (हिन्दू) बहुसंख्यक हैं तब तक इस देश में शान्ति और गणतन्त्र रहेगा परन्तु जहाँ-जहाँ भी मुस्लिम देश बनते जा रहे हैं वहाँ-वहाँ पर शान्ति समाप्त होती जा रही है।

2016 वर्ष पूर्व इस देश में कोई ईसाई नहीं था। 1500 वर्ष पूर्व कोई मुसलमान नहीं था। चार हजार वर्ष पूर्व कोई पारसी नहीं था। इससे पूर्व वैदिक धर्म था। कुछ धूर्त लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए सरल स्वभाव आर्य (हिन्दुओं) को दिशाभ्रष्ट किया। दुष्ट राक्षस दैवी संस्कृति के पोषक आर्य (हिन्दुओं) को पददलित करते जा रहे हैं। आततायियों की वृद्धि का एक ही कारण है वह प्रतिदिन कुरान तथा बाइबिल का न केवल पाठ करते हैं बल्कि आने वाली पीढ़ियों को उसके अनुसार आचरण करने के लिए संगठित भी कर रहे। वेद के अनध्याय आर्य (हिन्दुओं) की मृत्यु का कारण बनता जा रहा है। हम गीता पढ़ तो लेते हैं परन्तु गीता के उस वाक्य—

कलैव्यं मा स्म गम: पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते। क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप:॥

को भुला दिया है। श्रीकृष्ण जी अर्जुन को कहते हैं—हे अर्जुन! नपुंसकता को मत प्राप्त हो। तुझे यह उचित नहीं जान पड़ता। हृदय की तुच्छ दुर्बलता को त्याग कर युद्ध के लिए खड़ा हो जा। इस वाक्य के स्थान पर '**अहिंसा परमो धर्म:**' अपना लिया है। अहिंसा का त्रुटिपूर्ण अर्थ निकालते हुए धीरे-धीरे नपुंसक होता जा रहा है। अहिंसा का पालन करने के लिए दुष्टों की हिंसा भी अति आवश्यक है।

आज हमारी संस्कृति को नष्ट करने के लिए जहाँ पाश्चात्य सभ्यता हमें लील रही है, मुस्लिम संस्कृति हमारे अन्दर घुसकर लव जिहाद एवं

क्रमश: पृष्ठ 4 पर.....

www.thearyasamaj.org

स्वास्थ्य-चर्चा... प्रकृति का सर्वोत्तम उपहार : गन्ना

प्रकृति का अनुपम देन है-गन्ना, ईख या सांठा, इसे प्रत्यक्ष अमृत कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। भारतीय परम्परानुसार पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन और मांगलिक कार्यों में गन्ने से उत्पादित गुड़ का उपयोग अनिवार्य रूप से किया जाता है। नैवेद्य के रूप में गुड़ को ही प्राथमिकता दी जाती है। शुभ दीपावली पर्व पर पूजा में गन्ना प्रथम स्थान रखता है। इस तरह धार्मिक दृष्टि से भी गन्ने का बड़ा महत्त्व है।

शरीर के पोषण की दृष्टि से गन्ने में से सारे तत्त्व मौजूद हैं जो तन्दुरुस्ती के लिए आवश्यक और अनिवार्य माने गए हैं। दांत, आँख, कण्ठ, हृदय, पेट, दिमाग, टांगों, बाहों, हाथों और पैरों सभी अंगों में यह शक्ति का संचार करता है। इसे आयुर्वेद में 'रसायन' माना गया है-रसों का भण्डार। इसका रस हमारे शरीर में रक्त की कमी पूरी करता है, प्रकृति का यह ऐसा-'ब्लड बैंक' है जो जैसे शरीर में जाता है वैसे ही 'ग्रुप' का बन जाता है।

गन्ना हमें जीवन की शक्ति देता है, संक्रामण रोगों से बचाता है, शरीर के विकास में मदद देता है, गर्मी-सर्दी खुद सहता है। रस बनकर यह गर्मी दूर कर देता है और गुड़ बनकर सर्दी समाप्त कर देता है। गन्ने का ताजा रस अत्यन्त स्वादिष्ट और पौष्टिक है। विटामिन 'ए', 'बी', 'सी' और 'के' इसमें इतनी प्रचुरता से हैं कि सूखे बदन को भी रक्त-मांस-मज्जा, वीर्य से हरा-भरा कर देता है। कैल्शियम के कार्बनिक लवण, फास्फोरस, लोहा और मेगनीज शायद ही इतनी मात्रा में किसी दूसरी पदार्थ में हो। संसार का कोई भी 'कोल्ड ड्रिंक' स्वाद व पौष्टिकता में गन्ने के ताजा रस की बराबरी नहीं कर सकता।

उपयोगिता और मान्यता

आयुर्वेदाचार्यों का कथन है कि गन्ना प्रकृति की एक स्वास्थ्यवर्द्धक एवं पौष्टिक देन है। आयुर्वेद में गन्ना रस को श्रेष्ठ औषध कहा गया है, गन्ना रस शीतल, मधुर, शक्तिदायक और रोगनाशक है।

चरक, सुश्रुत और द्रव्य विज्ञान के ग्रन्थों में-गन्ने के रस को 'वृष्य' नाम से पुकारा गया है, 'वृष्य' (बैल-सांड) को कहते हैं और 'रति शक्ति' सम्पन्न को ही वृष्य माना गया है। गन्ने का रस वृष्य है अर्थात् मर्दानगी का स्रोत है, बल-वीर्य को पुष्ट करने के साथ-साथ रति शक्तिवर्द्धक है, जो नस-नस में जवानी की फड़कन जगा देता है व योनांगों के विकार दूर कर देता है।

यूनानी हकीमों के मतानुसार गन्ना रस शरीर में ताकत और ताजगी देने में अव्वल दर्जे की कुदरती दवा कहा गया है।

डॉक्टरों के मतानुसार गन्ना रस विटामिन 'बी' ग्रुप के सभी गुणों से भरपूर होने के कारण 'टॉनिक' का काम करता है। विटामिन 'ए' होने से नेत्र रोगों व नेत्र ज्योति बढ़ाने में भी लाभप्रद है। कैल्शियम की प्रचुरता होने से दांत तथा हड्डियां मजबूती प्राप्त करती हैं। लौह तत्त्व से भरपूर होने के कारण बच्चों और बड़ों में रक्त की कमी दूर होकर रक्त निर्माण के साथ-साथ रक्त शुद्ध भी होता है जिससे चर्मरोग, कील, मुंहासों से भी बचाव होता है।

लन्दन विश्वविद्यालय में रसायन शास्त्र के प्रोफेसर प्लीमर ने बार्कर और हफमैन के इन निष्कर्षों की पुष्टि कर दी है कि मील का गन्ना रस से बनी सफेद चीनी (शक्कर) शरीर में कई तरह के रोग उत्पन्न करने वाली है और स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। गुड़ अकेला ही पूरे भोजन की जरूरत पूरी कर देता है और चीनी अकेली ही पूरी भोजन के ताकत को नष्ट कर देती है।

लखनऊ स्थित-'भारतीय गन्ना शोध संस्थान' के प्रोसेस इंजीनियर डॉ. जसवन्तसिंह के कथनानुसार गन्ने से चीनी (शक्कर) उत्पादन के दौरान सभी प्रकार के विटामिन निकल जाते हैं, जबकि गुड़ बनाते समय गन्ने में मौजूद वे सारे विटामिन और खनिज तत्त्व गुड़ में विद्यमान रहते हैं, इसी तरह गन्ने के रस में सभी पोषक तत्त्व रहते हैं, अत एव गन्ना रस ही स्वास्थ्य के लिए उपयोगी रहता है।

गन्ना रस और गुड़ के कुछ प्रयोग

(1) पीलिया (जॉन्डिस)-सामर्थ्य से अधिक मेहनत और घटिया खुराक व गंदे माहौल में रहने से भी खून बनने की क्रिया में रुकावट आती है। इसके अतिरिक्त चरस, गांजा और अफीम के शौकीनों को पीलिया होना स्वाभाविक है, क्योंकि उनके फेफड़ों में चौबीसों घंटे जहर भरा रहता है। इसका सबसे आसान व सरल इलाज है 'गन्ना', गन्ने को चूसने से या गन्ने का ताजा रस पीने से ताजा खून बनने की प्रक्रिया चालू हो जाती है और श्वास नलिका व फेफड़ों का विष (जहर) घुल जाता है। इसीलिए रोगी को गन्ना चूसने की चिकित्सक द्वारा परामर्श दी जाती है, ऐसा न कर सकें वे निरोगी गन्ना (वानस्पतिक रोग रहित) का रस ताजा व शुद्ध पीने से पर्याप्त लाभ मिलता है।

(2) पथरी होने पर-प्रतिदिन गन्ना चूसें व गुनगुना गन्ना रस एक गिलास या दो गिलास पीने और रस की भाप लेने से शरीर की पूरी तरह शुद्धि हो जाती है, लगातार गन्ना का रस प्रयोग करने से पथर कट-कट कर मूत्र द्वारा बाहर निकल जाती है। गुड़ से मीठा किया हुआ गर्म दूध पीना भी हितकर है।

(साभार-वनौषधिमाला)

क्रमशः अगले अंक में....

दुष्टों की संगति से बचें.....

पृष्ठ 3 का शेष....

अन्य उपायों से हमें निर्बल कर रही है, वहाँ हमारे युवकों की अपने धर्म, सभ्यता, संस्कृति के स्थान पर प्रमाद, आलस्य और निष्ठाविहीनता की प्रबलता होती जा रही है। अब इस सोई हुई आर्य (हिन्दू) जनता को पुन: जगाने की आवश्यकता है। इसके लिए निम्नलिखित उपाय अपनाने होंगे—

(1) प्रत्येक गांवों में आर्यसमाजों की स्थापना की जाये ताकि उन्हें अपने गौरव से परिचित कराया जा सके।

(2) ऐसे राजनैतिक दल जो हमारे इतिहास को भ्रष्ट एवं नष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं, उन्हें वोट न दें।

(3) वैदिक धर्म प्रचारक दल बने ताकि प्रत्येक स्थान पर आर्य वैदिक संस्कृति का पुनरुत्थान हो।

(4) आर्य (हिन्दू) विद्वानों को मुस्लिम और ईसाइयों के पापों के पोलखाते खोलने वाला साहित्य लिखना चाहिए जो जन-जन तक पहुंचाया जा सके।

(5) प्रत्येक मुहल्ले, ग्राम एवं नगर में आर्य वीर दल की शाखायें खोलें ताकि युवकों को ब्रह्मचर्य एवं चरित्र निर्माण की शिक्षा दी जा सके।

(6) गुरुकुलों में अपनी संतानों को भेजें अन्यथा इन गुरुकुलों को आर्थिक सहायता प्रदान करें क्योंकि देश को स्वतन्त्र कराने में इन गुरुकुलों ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई है।

अब समय आ गया है कि आस्तीन के इन मुस्लिम, ईसाई सर्पों को पुन: इनके जन्म स्थान पर भेज दिया जाये उसके लिए हम आर्यों को पुन: जागना होगा।

परमात्मा कृपा करे कि हम ऋषि के ऋण से अनृण हों। यह तभी संभव है जब प्रत्येक आर्य (हिन्दू) आज से नहीं बल्कि अभी से यह संकल्प ले कि मैं पूरे विश्व को आर्य बनाने से पूर्व स्वयं को तथा परिवार को आर्य बनाने का प्रयास करूँगा।

संपर्क-4/44 शिवाजी नगर गुरुग्राम (हरयाणा) मो० 09911197073

सूचना

सभी आर्यसमाजों को, आर्य शिक्षण संस्थाओं को सूचित किया जाता है कि अपने सभी प्रकार के प्रचार कार्यक्रमों का विवरण 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक पत्र में छापने के लिए भेजें। साथ ही विद्वानों, लेखकों, बुद्धिजीवियों से आग्रह है कि वे अपने लेख, कविता आदि निम्न ई-मेल अथवा पते पर भेजें।

सम्पादक 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in

'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक की सदस्यता ग्रहण कर तथा धार्मिक एवं सामाजिक आयोजनों में 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' को सहयोग राशि भेजकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनिये।
सम्पर्क—01262-216222, मो० 08901387993

www.thearyasamaj.org

100वां वार्षिकोत्सव एवं शताब्दी समारोह

सन् 1916 (वि.सं. 1973) से वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार, महर्षि दयानन्द सरस्वती के मिशन को आगे बढ़ाने में नियमित रूप से सक्रिय आर्यसमाज 'शहर' बड़ा बाजार सोनीपत ने अपने सफर के 100 वर्ष पूरे कर लिए हैं। निष्ठावान्, समर्पित आर्य व्यक्तित्वों के अथक परिश्रम, नेक कमाई, समर्पण, सेवाभाव ने आर्यसमाज को बुलंदियों तक पहुंचाया है। हम अपने पूर्वजों की मेहनत को व्यर्थ न जाने दें। ऋषि मिशन को आगे बढ़ाने, दयानन्द के सपनों को साकार करने का हम सभी का सामूहिक दायित्व है। जो जाति अपने पूर्वजों के उपकारों, बलिदानियों की कुर्बानी को भूल जाती है, उनसे प्रेरणा प्राप्त नहीं करती है, वह शीघ्र ही ह्रास को प्राप्त हो जाती है। हम सभी की जिम्मेदारी है कि हम अपने गौरवशाली अतीत से कुछ सीख प्राप्त करें, अपनी विश्ववारा वैदिक संस्कृति को पुन: विश्वगुरु पद पर पहुंचाने का सत्प्रयास करें। यह सब स्वाध्याय, वैदिक सत्संगों का अधिकाधिक लाभ लेने से ही संभव हो पायेगा।

आर्यसमाज की ओर से कम्युनिटी सेंटर सामुदायिक केन्द्र सेक्टर-14 सोनीपत में आयोजित 100वें वार्षिकोत्सव एवं भव्य शताब्दी समारोह के पुनीत अवसर पर अबोहर से पधारे वैदिक मिशनरी, कई प्रामाणिक ग्रन्थों के रचनाकार, दयानन्द की विचारधारा को आगे बढ़ाने में अहर्निश समर्पित **प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु जी, जो स्वयं 86 वर्ष की आयु के हैं,** ने उपरोक्त उद्गार **94वें वर्षीय युवा महाशय धर्मपाल जी (MDH वाले)** की गरिमामयी उपस्थिति में सैकड़ों की संख्या में उपस्थित जनसमूह के समक्ष व्यक्त किये। गुरुकुल शिवगंज, सिरोही (राजस्थान) से ख्यातिप्राप्त, महान् विदुषी **आचार्या सूर्यादेवी जी** ने अपने सारगर्भित प्रवचनों से एवं वेदमन्त्रों की सरल व्याख्या द्वारा धर्मप्रेमी, जिज्ञासु जनता का मार्गदर्शन किया। हरयाणा सरकार द्वारा **फख्रे=हरयाणा** के गौरव से सम्मानित साहित्यकार, आर्य कवि **डॉ० राणा गन्नौरी जी** (दिल्ली) ने मुलतानी (सियायकी), हिन्दी भाषा में गायत्री मंत्र और वेदमन्त्र **'स्तुता मया वरदा वेदमाता'** का कवितानुवाद प्रस्तुत कर जनसामान्य को प्रेरित किया।

वैदिक सिद्धान्त मर्मज्ञ पं० रामचन्द्र आर्य (सोनीपत) ने पूरे सप्ताह अपने आध्यात्मिक प्रवचनों के माध्यम से वैदिक, दार्शनिक सिद्धान्तों तथा गुत्थियों को सरल ढंग से सभझाने का सत्प्रयास किया। 7 नवम्बर (सोमवार) से आयोजित किये गए इस भव्य शताब्दी समारोह का शुभारम्भ आर्यसमाज 'शहर' बड़ा बाजार सोनीपत परिसर में अग्निहोत्र (यज्ञ) के साथ किया गया जो कि सुयोग्य आर्यपुरोहित, वेद प्रचार अधिष्ठाता आर्य केन्द्रीय सभा श्री सुधांशु शास्त्री जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न किया गया। यज्ञोपरान्त आर्यसमाज परिसर से विशाल शोभायात्रा निकाली गई जिसका नेतृत्व आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के निवर्तमान प्रधान **आचार्य विजयपाल जी**, निवर्तमान महामंत्री **मा० रामपाल आर्य जी**, आर्यजगत् के भजनोपदेशक पं० योगेशदत्त आर्य ने किया। युवा संस्कार संगठन, वेदप्रचार मण्डल, आर्यसमाज 'शहर', आर्यसमाज सैक्टर-15 की वैदिक मन्तव्यों, देशभक्ति, यज्ञ पर आधारित आकर्षक झांकियों से सुसज्जित इस भव्य शोभायात्रा ने जनसमूह का मन मोह लिया। शोभायात्रा की सर्वत्र प्रशंसा की गई। विभिन्न वैदिक सत्संगों का आयोजन करने वाली सहयोगी संस्थाओं, आर्यसमाजों के गणमान्य व्यक्तियों, विद्यालयों के छात्र/छात्राएं, महिलाओं, युवाओं, बच्चों ने इस शोभायात्रा में भाग लिया। 7 नवम्बर सोमवार सायंकाल से आरम्भ सामुदायिक केन्द्र सैक्टर-14 के विशाल प्रांगण में इस भव्य शताब्दी समारोह की शेष सभाएं वेदरक्षा सम्मेलन, परिवार रक्षा सम्मेलन, युवा एवं राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, गौ, कृषि आदि रक्षा सम्मेलन, भ्रान्ति निवारण तथा संस्कृति रक्षा सम्मेलन, मातृशक्ति सम्मेलन, आर्यसमाज गौरवशाली अतीत तथा भावी उन्नति सम्मेलनों के रूप में आयोजित की गई। विख्यात युवा वैदिक विद्वान् आचार्य हरिप्रसाद जी, दर्शनाचार्य अचार्य सन्दीप जी, पदमश्री डॉ० सुभाष मलिक जी, आचार्य रवीन्द्र जी (महामंत्री अखिल भारतीय गोशाला समिति), आचार्य वेदव्रत जी (श्रुति ज्ञान महाविद्यालय, छपरा शाहबाद मारकण्डा), आचार्य वेदनिष्ठ जी (गुरुकुल जूआं), आर्य भजनोपदेशक पंडित योगेशदत्त आर्य (बिजनौर), पं० उदयवीर (मथुरा) ने अपने सारगर्भित प्रवचनों तथा मनोहर भजनोपदेशों के माध्यम से सभी सम्मेलनों की शोभा में चार चाँद लगा दिये। गुरुकुल शिवगंज सिरोही की ब्रह्मचारिणियों कविता, स्नेहा के सामगान तथा भजन, दीक्षित आर्यवीर के देशभक्ति पूर्ण ओजस्वी गीत, अभिषेक तथा राघव आर्यवीरों के प्रेरक भजन, सुरभि (मथुरा) के आध्यात्मिक और ऋषि गुणगान सम्बन्धी भजनों ने भावविभोर किया। आदरणीय राज गुलाटी जी (सोनीपत), कृष्णा आर्या (पूर्वमंत्री, दिल्ली), आशुकवियित्री राज सरदाना जी (नोएडा), श्रीमती ईश्वरदेवी जी पूर्व प्रधाना (रोजड़, गुजरात), श्रीमती लक्ष्मी आर्या (नोएडा), श्रीमती द्रोपदी सपड़ा (पूर्व प्रधाना तथा संरक्षिका) आदि ने भी विभिन्न सम्मेलनों में अपने-अपने उद्गार व्यक्त किये। मन्त्री श्री प्रवीण आर्य, श्री वेदपाल आर्य, पं० रामचन्द्र आर्य, श्री सुदर्शन आर्य (उपप्रधान) तथा हरयाणा संस्कृत अकादमी की सदस्या आचार्या दीक्षा ने मंच का कुशल संचालन किया। सप्ताह भर पूरे सम्मेलनों में विशिष्ट गणमान्य व्यक्तियों ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज की।

इस भव्य शताब्दी समारोह के अवसर पर मुख्य शताब्दी समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में आर्यजगत् के भामाशाह, विश्वविख्यात एमडीएच स्वामी शाह जी महाशय धर्मपाल जी, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के यशस्वी महामंत्री श्री विनय आर्य जी विशिष्ट अतिथि के रूप में, आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान श्री अशोक गोयल, लिटिल एंजल्स स्कूल के अध्यक्ष श्री आशीष आर्य (सोनीपत), श्री प्रेम अरोड़ा, वीरेन्द्र गुलाटी (दिल्ली), आचार्य प्रदीप, आचार्य वेदव्रत, आचार्य वेदनिष्ठ, वयोवृद्ध गुणपाल (आर्य भजनोपदेशक), श्री बलगानन्द (पूर्व प्रधान आर्यसमाज गोहाना), श्री शिवप्रसाद शर्मा (एडीसी सोनीपत), आचार्य ब्र० नन्दकिशोर, वैदिक प्रवक्ता श्री हर्षप्रिय आर्य (गुरुग्राम) आदि गणमान्य व्यक्तियों ने भाग लिया।

अध्यक्ष महोदय श्री अशोक गोयल जी के अध्यक्षीय उद्बोधन के पश्चात् आर्यसमाज 'शहर' सोनीपत के प्रधान श्री सुभाष चाँदना जी ने सभी विद्वज्जनों, भजनोपदेशकों, अतिथिगण, श्रोताओं, सहयोगी आर्यसमाजों/संस्थाओं, शोभायात्रा में सहयोगी विद्यालयों, संस्थाओं, अन्य व्यक्तियों का धन्यवाद ज्ञापित किया। आयोजन में समर्पित भाव से कार्यों को सम्पन्न करने वाली महिला समाज तथा अपनी पूरी टीम के उद्यम तथा उद्योग, सहयोग हेतु आभार व्यक्त किया। शान्तिपाठ एवं भोजन (ऋषिलंगर) के पश्चात् शताब्दी समारोह सम्पन्न किया गया।

-प्रवीण आर्य, सोनीपत

आर्य विद्वानों से अनुरोध

प्रतिवर्ष ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर टंकारा समाचार का ऋषि बोधांक प्रकाशित किया जाता है। आगामी बोधोत्सव 23, 24, 25 फरवरी, 2017 को समारोह पूर्वक आयोजित किया जा रहा है और इसी अवसर पर 'टंकारा समाचार' का ऋषि बोधांक प्रकाशित होगा।

आपसे प्रार्थना है कि आप अपने सारगर्भित अप्रकाशित लेख एवं कविता 15 जनवरी 2017 तक भिजवाकर कृतार्थ करें। लेख वेद, स्वामी दयानन्द, योग, स्वास्थ्य आदि एवं अन्य जन उपयोगी प्रेरणादायक विषयों पर ही सीमित हों। ऐसा निर्णय किया है कि प्रकाशनार्थ सामग्री टाइप की हुई दो या तीन पृष्ठों से अधिक न हो, तो सुविधाजनक रहेगा। आप प्रकाशनार्थ सामग्री ईमेल पर 'वॉकमेन चाणक्य' टाइप में कम्पोज करके भी भिजवा सकते हैं। इसके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी रहूँगा।

—अजय सहगल, सम्पादक, टंकारा समाचार, ए-419 डिफेन्स कॉलोनी, नई दिल्ली-110024 चलभाष नं० 9810035658

सत्यार्थप्रकाश

समाज में फैले अन्धकार, अन्धविश्वास, गुरुडमवाद, भ्रूणहत्या आदि बुराइयों को मिटाने के लिये सत्यार्थप्रकाश हरयाणा के प्रत्येक घर तक पहुंचाने का यत्न किया जाये। —संपादक

www.thearyasamaj.org

अजीब पहेली

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य

गतांक से आगे....

आत्मा की सत्ता-सभी भारतीय शास्त्रों में आत्मा को अजर-अमर और नित्य माना गया है। यह न तो कभी पैदा होती है और न ही मरती है, यह सदा एकरस रहती है और न जाने कितने अनन्त समय से यह चली आ रही है। शरीर के नष्ट होने पर भी यह नष्ट नहीं होती। श्वेताश्वतर उपनिषद् (5,9-12) में स्पष्ट रूप से लिखा है कि जीव अत्यन्त सूक्ष्म और सदा रहने वाला है। इस बात को उदाहरण के साथ स्पष्ट करते हुए ऋषि कहते हैं कि किसी बाल (केश) का अगला हिस्सा लो, उसके कम से कम कल्पना से ही सौ टुकड़े करो और उस एक टुकड़े के फिर सौ टुकड़े करो अर्थात् यह बात इतना सूक्ष्म होगा जो कि केवल कल्पना से ही कल्पित किया जा सकता है। वैसे ही यह आत्मा भी बहुत अधिक सूक्ष्म है।

अत: अणुवीक्षण यत्र की सहायता से भी दिखाई नहीं देती। यह सूक्ष्म आत्मा न स्त्री रूप में है और न ही पुरुष या नपुंसक रूप में, अपितु वह जैसे शरीर को धारण करता है, वह वैसा ही कहलाने लगता है। अर्थात् स्त्री, पुरुष शरीर के भेद हैं, आत्मा के नहीं। यह आत्मा अपने कर्मों के अनुरूप परमात्मा की व्यवस्था से अनेक प्रकार के स्थूल-सूक्ष्म शरीरों को अनेक योनियों में धारण करता है। जैसे कोई कभी ऊनी और कभी टेरीकॉट, पलिस्टर आदि के रंग-बिरंगे, मोटे-पतले अनेक आकारों के वस्त्र धारण करता है।

महात्मा जी ने इस गम्भीर रहस्य को समझाते हुए कहा—आत्मा को अजर-अमर-नित्य मानने से ही कर्मफल की व्यवस्था जंच सकती है। जैसे कि कपड़ों की अपेक्षा अधिक समय तक रहने वाला सचेतन शरीर कभी कोई वस्त्र पहनता है और कभी कोई। तभी तो वह पहले पहने हुओं को याद करके नयों के साथ उनकी तुलना करता है। इससे सिद्ध होता है कि वह दोनों स्थितियों में रहता है, तभी तो वह उनकी आपस में तुलना करता है। ऐसे ही एक शरीर वाला अनेक तरह के स्वाद वाले खट्टे, मीठे, चटपटे, नमकीन, तीखे आदि नाना प्रकार के पदार्थों को खाता है और फिर उनकी आपस में तुलना करता है तथा पहले खाये हुओं के स्वाद आदि का स्मरण करता है। ठीक इसी प्रकार यह नित्य आत्मा भी अपने पहले शरीरों में किये गए कर्मों के फल भोगने में समर्थ होता है, क्योंकि इस जन्म में किए गए सभी कर्मों का फल इसी जन्म में प्राप्त होता हुआ दिखाई नहीं देता। अत: यहां किये गए कर्मों के फल को भोगने के लिए इस जन्म के लिए इस जन्म के साथ आगामी जन्म की व्यवस्था को मानना आवश्यक हो जाता है तथा इस समय विविध योनियों में अनेक तरह की सांसारिक विषमताओं को देखकर कहा जा सकता है कि इस समय के विविध भेद केवल सामयिक परिश्रम के कारण ही नहीं है, अपितु पूर्वजन्मों के कर्मों के परिणाम स्वरूप भी होते हैं।

इस सारे का भाव यह है कि नित्य आत्मा की सत्ता से ही शरीर अपने व्यापार पूर्ण करने में समर्थ होता है तथा इसी आत्मा की सत्ता या असत्ता से जीवित और मृतक में भेद होता है। किसी की मृत्यु के बाद जब उसका पांच भौतिक देह नष्ट हो जाता है, तब जीवात्मा नाम का अविनाशी तत्त्व ही स्वकर्मों के अनुसार दूसरे शरीर को यथासमय धारण करता है। इसी का नाम ही आवागमन, पुनर्जन्म है। हमारे शास्त्र जहाँ इस बात का प्रतिपादन करते हैं, वहां आए दिन अनेक ऐसी घटनाएं सामने आती रहती हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह शिशु गत जन्म में इस स्थान पर इस रूप में था और उसने उन-उन स्थानों और सम्बन्धियों को भी पहचाना। यह ठीक है कि ऐसी बातें कुछ दिन ही याद रहती हैं, सब दिन नहीं। इसके पश्चात् सर्वप्रिय जी ने कहा—हां, अगली बैठक में वियोग और शोक पर विचार करेंगे।

चौथी बैठक

वियोग और शोक-आज की बैठक में श्रोता अत्यधिक उत्सुकता भरे दृष्टिगोचर होते हैं। संगीतप्रिय जी ने संसार की बनावट और परिवर्तन शीलता को सामने रखकर दो भजन गाए। तब महात्मा जी मंच पर पधारे और चारों ओर दृष्टि डालते हुए उन्होंने कहा—प्रिय श्रोताओ! पिछली बैठक के पश्चात् निकष ने अपनी कुछ आशंकाएं रखी थीं। अत: आप पहले उसकी बात सुनिए। तब चर्चा को आगे बढ़ाया जाएगा।

महात्मा जी के निर्देश पर निकष ने उठकर कहा—मैं एक लेख पढ़ रहा था, जिसमें यह प्रश्न उभारा गया है कि हम भारतीय पूरे विश्वास के साथ जब आत्मा को अजर-अमर मानते हैं तो फिर किसी की मृत्यु पर इतना अधिक शोक, करुण-क्रन्दन क्यों करते हैं? क्योंकि आत्मा की अमरता और मृत्यु का आपस में कोई मेल नहीं बनता? और आत्मा को अमर मानने पर रोने का क्या प्रसंग? अर्थात् जब आत्मा अमर है, तो उसकी मृत्यु नहीं हो सकती। मृत्यु के न होने पर उसके लिए शोक का सवाल नहीं उठता।

निकष की इस जिज्ञासा पर अपना प्रवचन प्रारम्भ करते हुए सर्वप्रिय जी ने कहा—निस्सन्देह यह एक समझने वाली बात है कि आत्मा अमर है, तो मौत किसकी होती है और अमर आत्मा के साथ मृत्यु तथा शोक का क्या मेल है? आज पहले शोक के सम्बन्ध में विचार करते हैं।

वैसे तो संसार में किसी से थोड़ी देर बाद भी बिछुड़ना प्राय: सभी को अच्छा नहीं लगता। फिर जिसके साथ वर्षों मिलजुलकर कार्य किया हो और एक लम्बे समय तक की मीठी यादें जुड़ी हुई हों। ऐसे वियोग में दिल भर आना, भारी हो जाना तो एक साधारण बात है। अत: अपने प्रिय परिजन के बिछोह पर हृदय में दु:ख, शोक का उमड़ना एक स्वाभाविक बात है। संयोग और वियोग का क्रम संसार के साथ प्रारम्भ से ही जुड़ा हुआ है। मानव हृदय की भावनाओं की समानता के कारण हमारे पूर्वजों ने भी वियोग वेदना का अनुभव किया जिसका काव्यात्मक चित्रण हमें अनेकत्र प्राप्त होता है। जैसे कि अपनी प्रिया इन्दुमती की मृत्यु पर राजा अज का विलाप।

क्रमश: अगले अंक में....

मै० कुलवन्त पिक्कल स्टोर, शाप नं० 115, मार्किट नं० 1, एन.आई.टी., फरीदाबाद-121001 (हरि०)
मै० मेवाराम हंसराज, किराना मर्चेन्ट, रेलवे रोड, रिवाड़ी-123401 (हरि०)
मै० मोहनसिंह अवतारसिंह, पुरानी मण्डी, करनाल-132001 (हरि०)
मै० ओम्प्रकाश सुरिन्द्र कुमार, गुड़ मण्डी, पानीपत-132103 (हरि०)
मै० परमानन्द साईं दित्तामल, रेलवे रोड, रोहतक-124001 (हरि०)
मै० राजाराम रिक्खीराम, पुरानी अनाज मण्डी, कैथल-132027 (हरि०)

www.thearyasamaj.org

प्रभु दान देने वाले का कल्याण करते हैं

❑ डॉ० अशोक आर्य, जी. 7, शिप्रा अपार्टमेंट, कौशाम्बी, जिला गाजियाबाद

परमपिता परमात्मा सदा ही दानदाता का कल्याण करते हैं, जो देता है, जो देव है, उसका वह प्रभु कल्याण करते हैं। यह ही प्रभु का सत्य है, यह ही प्रभु का व्रत है, यह ही प्रतिज्ञा है। इस तथ्य पर ही प्रकाश डालते हुये मन्त्र उपदेश कर रहा है- **यदग्न दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि। तवेत्तत् सत्यमग्निर:॥** ऋग्वेद 1.1.6॥ हे सब वस्तुओं के दाता, सब वस्तुओं को प्राप्त कराने वाले पिता, सबके अग्रणी, सबसे आगे रहने वाले प्रभु! धनदेव तथा आपकी प्रार्थना एक साथ नहीं की जा सकती। यह नियम तो आप ही ने बनाया है कि दाता की सदा प्रार्थना करो। प्रार्थना से ही दाता देता है। जब हम दाता से कुछ मांगते ही नहीं तो दाता को क्या पता की आप को किस वस्तु की इच्छा है, वह आप की इच्छा कैसे पूरा करेगा?

अशोक आर्य

अत: आपके बनाये गये नियम के अनुरूप हम दाता से, दाश्वान से मांगते हैं, कुछ पाने के लिये प्रार्थना करते हैं। दात, देव अथवा दान देने वाला भी हमारे लिये दाता है तथा आप सब से बड़े दाता हैं। हम किस को अपना अर्पण करें? जो धन देने वाला दाता है, उसे अथवा आपके प्रति अपना अर्पण करें। दोनों के समीप एक साथ तो बैठा नहीं जा सकता। ऐसा सम्भव ही नहीं है। हे पिता! आप कल्याण करने वाले हैं। आप ही हमारे लिये वित्त की व्यवस्था करने वाले हैं, आप ही हमारे लिये घर की, निवास की व्यवस्था करते हैं, आप ही हमारे लिये पशु आदि, धनादि रूप में सब प्रकार के भद्र पदार्थ देने वाले हैं।

इस प्रकार आपका यह नियम निश्चय ही सत्य है, आपके इस नियम के द्वारा हमारे उन दाश्वान् के अंगों में मधुर रसों का संचार करने वाले आप ही तो हैं। सब अंग-प्रत्यंगों में जीवनीय शक्ति, जीवनीय रसों का संचार करते हुये आप ही वास्तव में इन अंगों में सब रसों का संचार करने वाले, प्रवाह करने वाले हैं। अत: आप ही जीवन दाता हैं, जीवन देने वाले हैं। जब एक नन्हा-सा बालक अपने आपको पूरी तरह से अपने ही माता-पिता के अर्पण कर देता है, अपनी इच्छाओं को अपने माता-पिता की इच्छाओं से मिला लेता है। अब माता-पिता की इच्छा ही उस बालक की इच्छा बन जाती है। ऐसी अवस्था में ऐसे बालक का माता-पिता अपने से भी अधिक अपने इस बालक का ध्यान रखते हैं।

इस प्रकार की उत्तम भावना से वह अपने इस बालक का उत्तम निर्माण करते हैं। ठीक इस प्रकार ही जब एक दश्वान व्यक्ति उस पिता के प्रति स्वयं को समर्पित कर देता है, अर्पण कर देता है, तो बालक के माता-पिता के ही समान प्रभु भी उसे अत्यधिक प्रिय मानते हैं। अत: वह पिता भी हमें सब प्रकार की अभ्युदय कारक, आगे बढ़ाने वाली वस्तुएं, उन्नत कराने वाली वस्तुएं स्वयमेव ही उपलब्ध कराते हैं। जीव अल्पबुद्धि होता है।

जीव की इस अल्पज्ञता के कारण जीव अपने द्वारा धारण किया कोई व्रत भूल भी जावे, उससे कोई व्रत टूट भी जावे तो भी परमपिता का व्रत उसके पूर्ण ज्ञान के कारण टूट नहीं पाता। यह तो हम जानते हैं कि जीव अल्पज्ञ है। इस अल्पज्ञता के कारण अनेक बार कोई गलत वस्तु भी दे देता है किन्तु हमारा वह प्रभु तो पूर्ण है। अपनी पूर्णता के कारण उससे कभी कोई भूल सम्भव ही नहीं है। अत: वह सदैव ठीक ही करता है तथा ठीक वस्तु ही देता है।

सूचना

सभी आर्यसमाजों को, आर्य शिक्षण संस्थाओं को सूचित किया जाता है कि अपने सभी प्रकार के प्रचार कार्यक्रमों का विवरण 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक पत्र में छापने के लिए भेजें। साथ ही विद्वानों, लेखकों, बुद्धिजीवियों से आग्रह है कि वे अपने लेख, कविता आदि निम्न ई-मेल अथवा पते पर भेजें।

सम्पादक 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in

प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

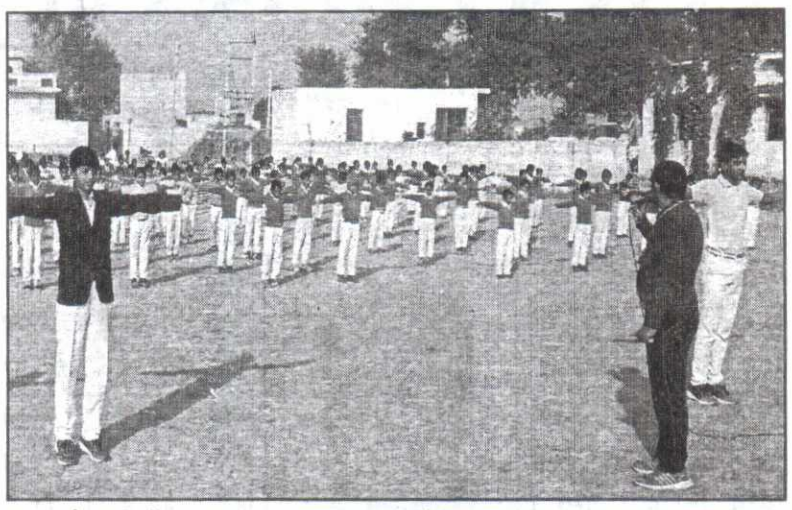

गाँव डाहौला स्थित ज्ञान विद्या मन्दिर में चल रहे तीन दिवसीय शारीरिक प्रशिक्षण शिविर का दिनांक 25.11.2016 को सम्पन्न हुआ। यह शिविर सार्वदेशिक आर्य वीर दल व आर्य बाल भारती पब्लिक स्कूल पानीपत के संयुक्त तत्त्वावधान में लगाया गया था।

इस शिविर में विद्यालय के 350 विद्यार्थियों को सर्वांगसुन्दर व्यायाम, सूर्य नमस्कार, भूमि नमस्कार व योगा का प्रशिक्षण मुख्य शिक्षक श्री महावीर आर्य द्वारा दिया गया जिससे बच्चों में बहुत ही उत्साह दिखाई दिया। अन्तिम दिन विद्यालय के निदेशक व वैदिक विद्वान् आचार्य अभय आर्य ने बच्चों को सम्बोधित किया। अपने सम्बोधन में उन्होंने स्वामी दयानन्द व स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन पर प्रकाश डाला। वहीं आचार्य राजकुमार शर्मा ने विद्यार्थियों को बाल हकीक, चन्द्रशेखर आजाद, पं० रामप्रसाद बिस्मिल के जीवन पर प्रकाश डाला। डीपीई श्री जगदीश चहल ने अनुशासन पर प्रकाश डाला। ज्ञान विद्या मन्दिर के प्रधानाचार्य सन्दीप कुमार ने सभी का धन्यवाद किया।

इस अवसर पर पीटीआई सन्दीप आर्य व विद्यालय के सभी अध्यापक व छात्र-छात्राएं मौजूद रहे।

दयानन्द के बताए वेदमार्ग पर चलने से ही विश्व का कल्याण होगा—नन्दलाल निर्भय

दिनांक 6.11.2016 प्रताप नगर दिल्ली। आर्य जगत् के प्रख्यात कवि एवं वैदिक विद्वान् पं० नन्दलाल निर्भय सिद्धांताचार्य मंत्री वैदिक धर्म सेवा समिति मेवात ने आर्यसमाज प्रतापनगर दिल्ली के उत्सव पर बोलते हुए कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जैसा उद्भट त्यागी, तपस्वी, ईश्वरभक्त, धर्मात्मा, परोपकारी विद्वान् संसार में कोई नहीं हुआ। महर्षि ने स्त्रीशिक्षा, गऊशाला, अछूतोद्धार का सर्वप्रथम उत्तम कार्य किया। जन्मेन जाति पाति का विरोध करते हुए कर्म प्रधानता का पाठ संसार को पढ़ाया।

आचार्य निर्भय जी ने सभा में स्पष्ट कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के बताए वेदमार्ग पर चलने से ही विश्व का कल्याण होगा।

इस उत्सव में आचार्य धर्मेन्द्र शास्त्री गाजियाबाद तथा श्री इन्द्रकुमार शास्त्री दिल्ली ने भी अपने प्रवचन से श्रोताओं को लाभान्वित किया।

आर्यसमाज के मंत्री श्री सेठी ने विद्वानों तथा श्रोताओं का धन्यवाद किया। प्रसाद वितरण व शान्ति पाठ के पश्चात् उत्सव का समापन हुआ।

—गुलशन कुमार आर्य, कोषाध्यक्ष
आर्यसमाज प्रताप नगर, दिल्ली-7

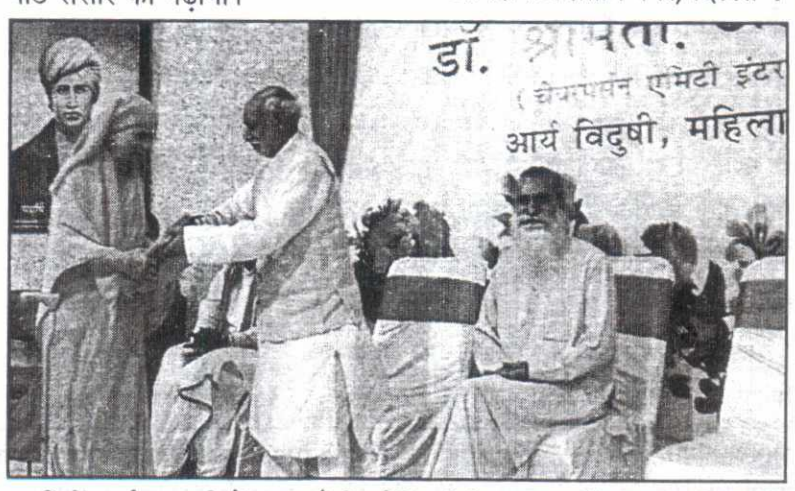

गत दिनों आर्यसमाज डिफैंस कालौनी नई दिल्ली के सभागार में माता सत्यप्रियायति जी को ठाकुर विक्रमसिंह ट्रस्ट द्वारा सम्मानित किया गया।

www.thearyasamaj.org

ईश्वर को जानकर ही सब मनुष्य सुखी होते हैं

❑ मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य के सुख का कारण क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में ऋग्वेद के एक मन्त्र संख्या 1/164/39 सहित अन्य चार मन्त्रों को प्रस्तुत कर दिया है। प्रथम मन्त्र है- **'ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधि विश्वे निशेदुः। यस्तन्न वेद किमृचा करिश्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते।।'** इस मंन्त्र का अर्थ करते हुए ऋषि दयानन्द जी कहते हैं कि ईश्वर सब दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव व विद्या से युक्त है और उसी में पृथिवी व सूर्यादि लोक स्थित हैं। ईश्वर आकाश के समान व्यापक है, वह सब देवों का देव अर्थात् महादेव है। उस परमेश्वर को जो मनुष्य न जानते न मानते और उस का ध्यान नहीं करते वे नास्तिक मन्दमति लोग सदा दुःखसागर में डूबे ही रहते हैं। इसलिए सर्वदा उस ईश्वर को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं। यहां ऋषि दयानन्द जी ने ईश्वर को सब दिव्य गुणों व विद्या से युक्त बताया है और कहा कि पृथिवी व सूर्य आदि आकाशस्थ सभी लोक लोकान्तर उसी में स्थित हैं अर्थात् उसी ने समस्त ब्रह्माण्ड को धारण कर रखा है। ईश्वर कोई एकदेशी व मनुष्य की जीवात्मा के समान एक स्थान में सीमित सत्ता नहीं है अपितु वह आकाश के समान सर्वत्र व्यापक अर्थात् सर्वव्यापक है। संसार में अन्न, जल, पृथिवी, अग्नि, वायु, आकाश, समस्त विद्वान आदि जितने भी देवता हैं, ईश्वर उन सब देवों का भी देव है। इसका एक अर्थ यह भी है कि इन भौतिक देवों में जो शक्ति व सामर्थ्य है, वह इन्हें सब ईश्वर प्रदत्त है। इन गुणों से युक्त परमेश्वर को जो मनुष्य जानते और मानते नहीं हैं वह सब मन्दमति और नास्तिक हैं। ऐसे अज्ञानी लोग दुःसागर में डूब रहते हैं और जो ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानता है वह उस सत्य ज्ञान से सुख को प्राप्त होता है। अतः सुख की प्राप्ति के लिए ईश्वर के सच्चे स्वरूप का ज्ञान व तदनुसार उसका स्तुति, प्रार्थना व उपासना से सत्कार करना आवश्यक है, यही सुख का आधार व कारण है।

इसके बाद ऋषि ने कुछ प्रश्नोत्तर प्रस्तुत कर शंका समाधान किया है जिसके बाद अन्य वेद मन्त्रों के अर्थों पर प्रकाश डाला है। ऋषि दयानन्द जी ने जो दो प्रश्न दिये हैं वह हैं (1) वेद में ईश्वर अनेक हैं इस बात को तुम मानते हो या नहीं ? व (2) वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं उस का क्या अभिप्राय है। प्रथम प्रश्न का उत्तर देते हुए वह कहते हैं कि वह अनेक ईश्वर नहीं मानते क्योंकि चारों वेदों में ऐसा कहीं नहीं लिखा जिससे अनेक ईश्वर सिद्ध हों किन्तु यह तो लिखा है कि ईश्वर एक है। दूसरे प्रश्न का उत्तर देते हुए वह बताते हैं कि देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहलाते हैं। जैसी कि पृथिवी, परन्तु इस को कहीं ईश्वर या उपासनीय नहीं माना है। देखो ! इसी मन्त्र में कि 'जिस में सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है।' यह उनकी भूल है जो देवता शब्द से ईश्वर का ग्रहण करते हैं। परमेश्वर देवों का देव होने से महादेव इसीलिये कहाता है कि वही सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्त्ता, न्यायाधीश और अधिश्ठाता है।

इसके आगे ऋषि दयानन्द कहते हैं कि जो **'त्रयस्त्रिंशत्त्रिशता0'** इत्यादि वेदों में प्रमाण हैं इसकी व्याख्या शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ में की है कि तैंतीस देव अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य, और नक्षत्र सब सृष्टि के निवास स्थान होने से यह आठ वसु हैं। प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय और जीवात्मा, यह ग्यारह रुद्र इसलिये कहाते हैं कि जब शरीर को छोड़ते हैं तब रोदन कराने अर्थात् रुलाने वाले होते हैं। संवत्सर के बारह महीने बारह आदित्य इसलिये हैं कि ये सब की आयु को लेते जाते हैं। बिजली का नाम इन्द्र इस हेतु से है कि परम ऐश्वर्य का हेतु है। यज्ञ को प्रजापति कहने का कारण यह है कि जिस से वायु वृष्टि जल ओषधी की शुद्धि, विद्वानों का सत्कार और नाना प्रकार की शिल्पविद्या से प्रजा का पालन होता है। यह तैंतीस पदार्थ पूर्वाक्त गुणों के योग से देव कहाते हैं। इनका स्वामी और सब से बड़ा हाने से परमात्मा चौंतीसवां उपास्यदेव शतपथ ब्राह्मण के चौदहवें काण्ड में स्पष्ट लिखा है। इसी प्रकार अन्यत्र भी लिखा है। जो लोग वेदों में अनेक देवों का होना मानते हैं वह यदि वेद और शतपथ ब्राह्मण आदि शास्त्रों को देखते तो वेदों में अनेक ईश्वर माननेरूप भ्रमजाल में गिरकर क्यों बहकते।

इसके बाद चार और मन्त्रों का भाव प्रस्तुत करते हुए ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि हे मनुष्य ! जो कुछ इस संसार में जगत् है उस सब में व्याप्त होकर जो नियन्ता (सबको नियम में रखने वाला व जीवों को उनके कर्मानुसार फल देनेवाला) है वह ईश्वर कहलाता है। उस से डर कर हे मनुष्यो ! तुम अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत करो। उस अन्याय के त्याग और न्यायाचरण रूप धर्म के पालन से अपनी आत्मा से सर्वाधिक सुख अर्थात् आनन्द का भोग करो। इसके आगे वह कहते हैं कि ईश्वर सब को उपदेश करता है कि हे मनुष्यो ! मैं ईश्वर सब के पूर्व विद्यमान सब जगत् का स्वामी हूं। मैं सनातन जगत्कारण और सब धनों का विजय करनेवाला और दाता हूं। मुझ ही को सब जीव जैसे पिता को सन्तान पुकारते हैं, वैसे पुकारें। मैं सब को सुख देने हारे जगत् के लिये नाना प्रकार के भोजनों का विभाग पालन करने के लिये करता हूं। परमेश्वर वेद द्वारा शिक्षा करते हुए कहते हैं कि मैं परमैश्वर्यवान्, सूर्य सदृश सब जगत् का प्रकाशक हूं। कभी पराजय को प्राप्त नहीं होता और न कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूं। मैं ही जगत् रूप धन का निर्माता हूं। सब जगत् की उत्पत्ति करने वाला मुझ ही को जानो। हे जीवों ! ऐश्वर्य प्राप्ति के यत्न करते हुए तुम लोग विज्ञानादि धन को मुझ से मांगो और तुम लोग मेरी मित्रता से अलग मत होओ। वेदों में ईश्वर मनुष्यों को उपदेश करते हुए यह भी कहते हैं कि हे मनुष्यो ! मैं सत्यभाषणरूप स्तुति करनेवाले मनुष्य को सनातन ज्ञानादि धन को देता हूं। मैं ब्रह्म अर्थात् वेद का प्रकाश करनेहारा और मुझ को वह वेद यथावत् कहता, उस से सब के ज्ञान को मैं बढ़ाता, मैं सत्पुरुषों का प्रेरक, यज्ञ करनेहारे को फलप्रदाता और इस विश्व में जो कुछ है, उस सब कार्य का बनाने और धारण करने वाला हूं। इसलिये तुम लोग मुझ को छोड़ किसी दूसरे को मेरे स्थान म मत पूजो, मत मानो और मत जानो।

महर्षि दयानन्द ने वेद मन्त्रों के आधार पर उपर्युक्त जो व्याख्यान दिया है वह यथार्थ एवं व्यवहारिक है। ईश्वर को जानने, मानने व उसकी उपासना से जो सुख मिलता है वह स्थायी सुख होता है जिसका परिणाम जन्म व मरण के चक्र से मुक्ति का मिलना और उसके बाद लम्बी अवधि तक ईश्वर के सान्निध्य में रहकर आनन्द का भोगना होता है। ईश्वर को न मानने व न जानने वालो वास्तविक सुखों से वंचित रहते हैं। भौतिक पदार्थों को प्राप्त कर उनसे जो सुख प्राप्त किया जाता है वह क्षणिक व सीमित होने के साथ परिणाम में दुख देने वाला होता है। धन बड़ी कठिनाई से कमाया जाता है। यदि वह चोरी हो जाये तो कष्ट होता है। कई बार धन के कारण लोग धनिकों की हत्या व उनके बच्चों का अपहरण जैसे कार्य भी कर देते हैं जो परिणाम में दुःखदायी ही होते हैं। स्वादिष्ट भोजन करने का सुख जब तक वह जिह्वा के सम्पर्क में होता है, तभी तक होता है। उससे पृथक होते ही वह सुख समाप्त हो जाता है। कई बार कुछ विशेष भोजन ही रोग का कारण बन कर दुःखदायी हो जाते हैं। अतः स्थाई सुख के लिए मनुष्यों को वैदिक शिक्षा के अनुसार ईश्वर के यथार्थ स्वरूप को जानने का प्रयास करना चाहिये और उसे जानकर वेद व योगाभ्यास से ध्यान विधि से उपासना कर स्थायी आनन्द प्राप्त करना चाहिये। हम आशा करते हैं कि पाठक सुख की उपलब्धि का प्रमुख स्रोत ईश्वर का ज्ञान व उपासना को जानकर जीवन में सुख का लाभ करेंगे। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

196 चुक्खूवाला-2 देहरादून-248001
फोन 09412985121

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक **मा० रामपाल आर्य** ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स, माता मन्दिर चौक, पाड़ा मोहल्ला, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001 से प्रकाशित। पत्र में प्रकाशित लेखसामग्री से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
प्रत्येक विवाद के लिए न्यायक्षेत्र रोहतक न्यायालय होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जाएगी।